अपनी बात

तिब्बती शिक्षण संस्थाओं में पुनर्जीवित भारतीय संस्कृति

भारत में रह रहे तिब्बतियों एवं अन्य तिब्बत समर्थकों का उत्साह से भरपूर आत्मविश्वास सराहनीय है। मई–जून 2015 में कर्णाटक यात्रा के दौरान बैलकुप्पा, हुंसुर तथा मंडगौड के तिब्बती कैंपो में ऐसा ही अनुभव हुआ। इन दिनों अन्य प्रांतों में स्थित तिब्बती कैंपों से कई तिब्बती, विशेषकर युवा तिब्बती, यहाँ आए हुए हैं। तिब्बत में बदतर हो रही परिस्थिति से वे काफी परेशान हैं। शांतिप्रिय तिब्बतियों द्वारा किए जा रहे आत्मदाह से वे चिंतित हैं।उन्हें सर्वाधिक चिंता है तिब्बत की सांस्कृतिक विरासत की। उनका मत है कि तिब्बत की संस्कृति शांति, अहिंसा मैत्री एवं करुणा की संस्कृति है। यह पर्यावरण–संरक्षण, प्रकृति से सामंजस्य तथा सामाजिक समरसता एवं सांप्रदायिक सद्भाव की संस्कृति है। चीन सरकार षड्यंत्रपूर्वक तिब्बत की संस्कृति को नष्ट कर रही है। चीनी मूल के लोगों की संख्या वहाँ इतनी बढ़ाई–बसाई जा रही है कि तिब्बत में तिब्बती ही अल्पसंख्यक हो चले हैं। ऐसी खराब परिस्थिति में उनकी चीन सरकार से एक ही मांग है कि वह तिब्बत को ''वास्तविक स्वायत्तता''प्रदान कर दे।

परम पावन दलाई लामा एवं निर्वासित तिब्बत सरकार की मांग भी ''वास्तविक स्वायत्तता'' की है। उनके अनुसार यह चीन सरकार के संविधान तथा कानून के अनुकूल है। उन्हें चीन की संप्रभुता स्वीकार है। तिब्बती चाहते हैं कि शिक्षा, संस्कृति, कृषि, भाषा आदि विषयों से संबंधित कानून–नियम बनाने का अधिकार चीन सरकार उन्हें सौंप दे। चीन सरकार को चाहिए कि वह इस मांग पर गंभीरतापूर्वक विचार करे। इस बिन्दु पर वह दलाईलामा के प्रतिनिधि तथा निर्वासित तिब्बती सरकार के प्रतिनिधि के साथ सार्थकवार्ता करे। वार्ता के लिए उपयुक्त वातावरण बनाने हेतु वह तिब्बत में मानवाधिकारों की सुरक्षा करे। दमनात्मक कार्रवाई पर रोक लगाए। बेकसूर तिब्बतियों एवं उनके समर्थकों को जेलों से रिहा करे। उनके ऊपर थोपे गए मुकदमों को खत्म करे। ऐसे कदम उठाकर चीन सरकार अपनी अंतरराष्ट्रीय छवि भी सुधार सकती है।

भारत के विभिन्न प्रांतो में रह रहे तिब्बती भारत सरकार एवं भारत की जनता के प्रति हृदय से कृतज्ञ हैं। बुजुर्ग हो चुके तिब्बती अभी भी नमआँखों से याद करते हैं कि 1959 में चीन के अवैध कब्जे के बाद वे तिब्बत से भाग कर भारत आए थे। उस समय वेसा धनविहीन थे। भारत में उन्हें भरपूर सहयोग मिला। उन्होंने भारत को अपना परिवार समझा और भारत में भी उन्हें हर समय अपनापन मिल रहा है। वे बताते हैं कि इसी कारण वे स्वावलंबी एवं स्वाभिमानयुक्त जिंदगी जी रहे हैं। भारत को तिब्बती अपनी गुरु भूमि मानते हैं इसीलिए अपने चेले तिब्बत की देखभाल की जिम्मेदारी को भारत अपनी नैतिक–आध्यात्मिक–सांस्कृतिक जिम्मेदारी समझे।

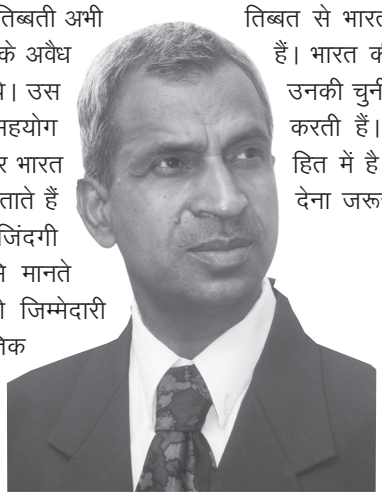

तिब्बती कैंप भारतीय संस्कृति के संरक्षक बने हुए हैं। सेराजे, सेरामे, ग्युदमेदतांत्रिक, गदेन तथा द्रिपुंगमठीय विश्वविद्यालय बौद्ध दर्शन के शिक्षण संस्थान हैं। प्राचीन नालंदा, विक्रमशीला और तक्षशिला विश्वविद्यालयों से जो ज्ञान–भंडार नष्ट हो चुका था उसे ये पुनर्जीवित किए हुए हैं। लेह के चोगलमसर तथा वाराणसी के पास स्थित सारनाथ समेत भारत के विभिन्न प्रांतों में चल रहे तिब्बती शिक्षण संस्थानों ने लुप्त हो चुके संस्कृत के कई ग्रंथों को पुनःप्रकाशित किया है। गत कुछ वर्षों से तिब्बत से भाग कर भारत आने वाले तिब्बती शरणार्थियों की संख्या काफी कम हो गई है। इसलिए इन संस्थानों में भारत के ही, विशेषकर हिमालय क्षेत्र के विद्यार्थी अध्ययन कर रहे हैं। इस तरह भारतीय संस्कृति की सुरक्षा एवं विकास में तिब्बतियों का बहुत बड़ा योगदान है।

कई लड़के–लड़कियों का कहना है कि वे भारत में पढ़ाई करके तिब्बत चले जायेंगे। आजादी से भी ज्यादा जरूरी है आजादी के लिए संघर्ष करने तथा स्वदेश–प्रेम की भावना। लेकिन भावना के ऊपर भी अनुशासन को महत्व। तिब्बती आंदोलनकारी शांतिपूर्ण अहिंसक आंदोलन को ही उचित आंदोलन मान रहे हैं। इसी का परिणाम है कि विश्व जनमत तिब्बती आंदोलन के साथ है। तिब्बती कैंपों में विभिन्न देशों की संस्थाओं द्वारा समर्पित उपकरण, भवन, यंत्र तथा सहयोग देखे जा सकते हैं। इससे यह भी पता चलता है कि तिब्बत के पक्ष में अंतरराष्ट्रीय समर्थन केवल मौखिक समर्थन नहीं है। चूँकि तिब्बतियों की 'मध्यम मार्ग' अर्थात् 'वास्तविक स्वयत्तता' की नीति अन्य देशों को भी पसंद है इसीलिए वे हर प्रकार से तिब्बतियों की मदद कर रहे हैं।

तिब्बती कैंप भारत–चीन संबंधों के मामले में यथार्थवादी हैं। कई तिब्बती भारत की कूटनीतिक मजबुरी की चर्चा खुद करते हैं। भारत की कूटनीतिक परेशानी का ही प्रमाण है कि जो व्यक्ति या संगठन सरकार से बाहर रहते हैं वे तिब्बती आंदोलन का सक्रिय समर्थन करते हैं लेकिन वे ही सरकार में आने के बाद चीन के साथ वार्ता करते समय तिब्बत के प्रश्न को ज्यादा गम्भीरता से उठाने में हिचकिचाहट दिखाते हैं। इस एक अपवाद को छोड़कर वे सभी भारत में रह रहे और तिब्बत से भारत आने वाले तिब्बतियों की हर संभव सहायता करते हैं। भारत की केंद्रीय सरकार तथा प्रांतीय सरकारें तिब्बतियों एवं उनकी चुनी हुई निर्वासित सरकार के साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करती हैं। वास्तव में तिब्बत समस्या का हल भारत के अपने हित में है। अतः भारतीय कूटनीति में तिब्बत को पर्याप्त महत्व देना जरूरी है। ◆

प्रो0 श्यामनाथ मिश्रा
पत्रकार एवं अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
खेतड़ी (राज.)
ek-&9829806065] 8764060406
E-mail & Facebook :- shyamnathji@gmail.com

शीर्ष तिब्बती धार्मिक हस्ती के अपहरण के 20वीं वर्षगांठ के अवसर पर, चीन से उन्हें रिहा करने का अनुरोध

(तिब्बतनरीव्यू डॉट नेट, 19 मई, 2015)

धर्मशाला में रहने वाले तिब्बती और उनके समर्थक चीन सरकार द्वारा 11वें पंचेन लामा को अपहृत करने और गायब कर देने की 20वीं वर्षगांठ के अवसर पर 17 मई को आयोजित एक कार्यक्रम में जमा हुए। पंचेन लामा तिब्बतियों के दलाई लामा के बाद दूसरे सबसे प्रभावशाली धार्मिक हस्ती हैं। इस दिन को तिब्बत के साथ अंतरराष्ट्रीय एकजुटता दिवस के रूप में मनाया गया। टीसीवी डे स्कूल में आयोजित कार्यक्रम में निर्वासित तिब्बती संसद के अध्यक्ष श्री पेनपा सेरिंग के अलावा कई गणमान्य हस्तियां शामिल हुईं।

छह साल के गेदुन छोक्यी निमा को निर्वासित तिब्बती आध्यात्मिक नेता दलाई लामा ने 14 अप्रैल 1995 को 10वें पंचेन लामा का पुनर्जन्म घोषित किया था। यह पुनर्जन्म की तलाश में लगे लोगों के साथ गोपनीय तरीके से हुई बातचीत और खुद दलाई लामा की अपनी जांच–पड़ताल के बाद सामने आया था। लेकिन इसके तीन दिन बाद चीन सरकार ने छह साल के बच्चे निमा और उनके परिवार का अपहरण कर लिया और उनकी जगह एक दूसरे बच्चे ग्यालत्सेन नोर्बू को 11वां पंचेन लामा घोषित किया। तब से कुछ पता नहीं चल पा रहा है कि गेदुन छोक्यी निमा और उनका परिवार कहां हैं।

संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार एजेंसियों सहित अंतरराष्ट्रीय समुदाय द्वारा लगातार अनुरोध के बावजूद चीन ने इस बारे में जानकारी को लगातार छिपाया है कि निमा कैसे हैं और कहां हैं। चीन का लगातार यह बयान रहा है कि वह बच्चा नहीं चाहता कि उसे परेशान किया जाए और उसे "अलगाववादियों द्वारा अपहरण" से बचाने के लिए सुरक्षा की जरूरत है। बीबीसी डॉट कॉम के अनुसार चीन ने कहा है कि उन्हें स्कूली शिक्षा दी गई है और अब वह चीन में सामान्य जीवन जी रहे हैं। उनके मां–बाप सरकारी कर्मचारी हैं और उनके भाई–बहन भी नौकरी या पढ़ाई कर रहे हैं।

इस अवसर पर तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग (डीआइआइआर) द्वारा आयोजित सार्वजनिक चर्चा में शामिल वक्ताओं में तिब्बत नीति संस्थान के निदेशक थुबटेन सामफेल, तिब्बती मानवाधिकार एवं लोकतंत्र केंद्र की निदेशक सुश्री सेरिंग त्सोमो, डीआइआइआर के सचिव श्री सोनम धागपो शामिल थे।

इस अवसर पर निर्वासित तिब्बती प्रशासन के बयान को श्री धागपो ने पढ़ा। इसमें अंतरराष्ट्रीय समुदाय से यह आग्रह किया गया है कि वह चीन से यह अनुरोध करने के लिए संयुक्त प्रयास करें कि वह पंचेन लामा और सभी राजनीतिक बंदियों को रिहा कर दे।

बीबीसीडॉट कॉम की खबर के अनुसार लंदन में तिब्बत कार्यालय के प्रवक्ता श्री वांगड्यू ने कहा कि गेदुन छोक्यी निमा के गायब होने के 20वीं वर्षगांठ पर 17 मई को पूरी दुनिया में कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। लंदन में चीनी दूतावास के बाहर एक मोमबत्ती जुलूस भी निकाला गया।

वीओए तिब्बतन इंग्लिश डॉट कॉम की 18 मई की खबर के अनुसार धर्मशाला से लेकर नई दिल्ली, न्यूयॉर्क, पेरिस, लंदन, बार्सिलोना और दुनिया में अन्य कई जगहों पर जुलूस, रैलियों, विरोध प्रदर्शन, प्रचार और सोशल मीडिया अभियान का आयोजन हुआ।

चीन ने स्वतंत्र तिब्बत को 1951 में एक 17 बिंदुओं वाले समझौते पर मजबूर किया था, जिसमें तिब्बत में 'एक देश, दो विधान' प्रणाली लागू करने का वायदा किया गया था। चीन द्वारा इस समझौते का भी सम्मान न करने पर 1959 में तिब्बत में एक जनक्रांति हुई, जिसे चीन ने कुचल दिया। चीन ने लोकतांत्रिक सुधारों के नाम पर तिब्बत में तथाकथित स्थानीय सरकार को भी भंग कर दिया। दसवें पंचेन लामा, जिन्हें चीन ने भी स्वीकार किया था, चीन सरकार के हान नस्ल के पक्षपात वाली नीतियों के गंभीर आलोचक थे। ◆

सिक्योंग ने वाशिंगटन डीसी में चीनी विद्वानों के बीच दिया भाषण

(14 मई, 2015, तिब्बत डॉट नेट)

तिब्बती जनता के लोकतांत्रिक तरीके से चुने गए नेता सिक्योंग डॉ. लोबसांग सांगे ने 13 मई को वाशिंगटन डीसी में 'तिब्बत के भविष्य के लिए चिंता?' विषय पर 40 से ज्यादा तिब्बती विद्वानों के बीच व्याख्यान दिया। यह चीन में लोकतंत्र लाने के जमीनी आंदोलन इनिशिएटिव्स फॉर चाइना (आइएफसी) द्वारा आयोजित एक संवाद के तहत हुआ जिसका संचालन आइएफसी के संस्थापक/अध्यक्ष, हावर्ड में डॉ. सांगे के साथी और करीबी रहे, डॉ. यांग जियानली ने किया। सिक्योंग ने विद्वानों के बीच अपने संबोधन में चीनी और तिब्बती जनता के बीच संवाद के महत्व पर बल दिया ताकि दोनों जनता के बीच रहे ऐतिहासिक भरोसे और दोस्ती को फिर से बहाल किया जा सके। हालांकि बाद में दोनों जनता के बीच के इस भरोसे और दोस्ती का रिश्ता तनावपूर्ण हो गया क्योंकि चीन सरकार ने गलतफहमी और अशांति पैदा करने के लिए लगातार दुष्प्रचार किया।

तिब्बत मसले के सार को बहुत सरलीकृत किए बिना सिक्योंग ने यह समझाया कि तिब्बत मसले को अंग्रेजी के चार एम लेटर से वर्णित किया जा सकता है, मिस्टेक (गलती), मिसट्रस्ट (अविश्वास), मिडल वे (मध्यम मार्ग) और मिसअंडरस्टैंडिंग या मिसइंटरप्रिटेशन (गलतफहमी या गलत व्याख्या)।

उन्होंने कहा कि चीनी कम्युनिस्ट सरकार के सुरक्षा बलों द्वारा तिब्बत पर कब्जा और उसके बाद तिब्बती जनता का लगातार दमन एक गलती है।

उन्होंने कहा, "यदि आप पीछे इतिहास में देखें तो तांग वंश से लेकर क्विंग वंश और कुओमितांग युग तक तिब्बत पर चीन ने सिर्फ एक बार हमला किया था और चीनी सेनाएं वहां आई भी थीं, लेकिन चीनी सेनाएं कभी भी तिब्बत में ठहरी नहीं और उनका दमन कभी भी इस तरह से गंभीर नहीं रहा है, इसलिए मैं समझता हूं कि ऐतिहासिक संदर्भ का हवाला देना एक गलती है।"

सिक्योंग ने कहा कि यह गलती ही दोनों तरफ की जनता के बीच बने अविश्वास की जड़ है। सिक्योंग ने कहा, "गलती को सुधारने की जगह चीन सरकार ने तिब्बत में राजनीतिक दमन, सांस्कृतिक विलोपन, सामाजिक भेदभाव, आर्थिक हाशियाकरण और पर्यावरण विनाश की अपनी नीति को जारी रखा है, जिसकी वजह से तिब्बती जनता में चीन सरकार के प्रति अविश्वास पैदा हुआ है।"

सिक्योंग डॉ. लोबसांग सांगे ने चीनी दमन एवं कब्जे की वजह से तिब्बत में जारी अविश्वास का साक्षात उदाहरण जोखांग मंदिर को बताया।

उन्होंने कहा, "जोखांग तिब्बती बौद्धों के लिए सबसे पवित्र तीर्थ स्थल है। दिलचस्प बात यह है कि जोखांग में बुद्ध की एक मूर्ति स्थापित है जिसे तिब्बत में एक चीनी राजकुमारी वेनछेंग लेकर आई थीं, उनका विवाह तिब्बती राजा सांगत्सेन गाम्पो के साथ हुआ था। शताब्दियों से तिब्बती इस मंदिर में पूजा करते रहे हैं। हालांकि, यदि आप अब जोखांग मंदिर जाएं तो वहां आपको जगह–जगह निगरानी कैमरा और छतों पर तैनात शॉर्प शूटर सुरक्षा बल दिख जाएंगे, इससे तिब्बती काफी आशंकित रहते हैं कि आखिर जोखांग में हो क्या रहा है।"

सिक्योंग ने दोहराया, "जोखांग मंदिर के प्रति तिब्बती जनता के व्यवहार में यह भारी बदलाव कई सवाल खड़े करता है। आखिर कैसे एक पवित्र स्थान एक डरावने पुलिस थाने में तब्दील हो गया? संभवतः यह तिब्बत पर चीनी कब्जे के बाद दोनों जनता के बीच बने अविश्वास का सबसे बड़ा उदाहरण है।"

मध्यम मार्ग नीति के बारे में बोलते हुए सिक्योंग ने कहा कि इस नीति का प्रस्ताव परमपावन दलाई लामा ने रखा था और इसे केंद्रीय तिब्बती प्रशासन ने लागू किया ताकि दोनों जनता के बीच बने अविश्वास को हमेशा के लिए खत्म किया जा सके।

सिक्योंग ने इसके बारे में विस्तार से बताते हुए कहा, "मध्यम मार्ग नीति के द्वारा चीनी संविधान के भीतर ही तिब्बती जनता के लिए वास्तविक स्वायत्तता की मांग की जा रही है। चीन सरकार का हमेशा यह आरोप रहा है कि तिब्बतियों का उद्देश्य देश को विभाजित करना है, इसलिए हमने यह विचार किया कि चीन की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता को चुनौती नहीं देनी है।" उन्होंने कहा कि यह प्रस्ताव इतना वाजिब और संयमित है कि इससे समस्या का हल आसानी से निकल सकता है।

सिक्योंग ने कहा, "लेकिन इस प्रस्ताव पर सकारात्मक तरीके से प्रतिक्रिया देने की जगह चीन सरकार ने गलत व्याख्या और गलत सूचनाओं का सहारा लिया है, इसलिए गलतफहमी बढ़ी है।"

सिक्योंग ने अपने तर्क को स्पष्ट करने के लिए हाल में चीन सरकार द्वारा जारी एक श्वेतपत्र में एक बयान को उद्धृत किया। उन्होंने बताया, "हाल के श्वेतपत्र में यह कहा गया है कि प्राचीन काल से ही तिब्बत, चीन का अंग रहा है। हालांकि, वर्ष 2004 में तिब्बत पर चीन द्वारा जारी इसी तरह के एक श्वेतपत्र में कहा गया था कि तिब्बत 13वीं शताब्दी से ही चीन का हिस्सा है। लेकिन यदि आप गणतंत्र युग के लेखकों की किताबें पढ़ें तो उनमें बताया गया है कि तिब्बत गणतंत्र या कुओमितांग युग में चीन का हिस्सा बना। इसके बाद यदि आप चीन सरकार के दबाव में तिब्बती प्रतिनिधिमंडल द्वारा 21 मई 1951 को दस्तखत किए गए 17 बिंदुओं वाले समझौते को पढ़ें तो उस समझौते के प्रस्तावना में ही कहा गया है–'तिब्बत को उसकी मातृभूमि में वापस आना चाहिए। " सीक्योंग ने कहा कि यदि तिब्बत हमेशा से चीन का हिस्सा रहा है तो आखिर तिब्बत कहां से वापस लौट रहा था? सिक्योंग ने कहा, "तिब्बत के बारे में चीन सरकार के वर्णन तमाम अंतर्विरोधों से भरे हुए हैं।

अपनी बात को और वजन देने के लिए सिक्योंग ने फुदान विश्वविद्यालय के एक प्रख्यात चीनी इतिहासकार को याद किया, जो चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सलाहकार बोर्ड में थे। उन्होंने कहा था कि चीन यह दावा नहीं कर सकता कि प्राचीन काल से ही तिब्बत उसका हिस्सा रहा है क्योंकि तांग वंश के दौरान तिब्बत एक संप्रभु राष्ट्र रहा है।

उन्होंने यह बात भी जोर देकर कही कि चीन सरकार द्वारा तिब्बत पर जारी हालिया श्वेतपत्र दुनिया के सामने गलत व्याख्या करने और गुमराह करने के लिए है। उन्होंने कहा, "श्वेतपत्र में यह आरोप लगाना कि तिब्बती प्रस्ताव के साथ मध्यम मार्ग नीति की प्रासंगिकता कम है और इसके बारे में दुष्प्रचार करना वास्तव में तिब्बत के मसले पर गलतफहमी पैदा करने की कोशिश है।"

सिक्योंग ने अपने संबोधन के अंत में चीनी विद्वानों को फिर से यह भरोसा दिलाया कि परमपावन दलाई लामा और तिब्बती जनता तिब्बत मसले को हल करने के लिए गहराई से प्रतिबद्ध है।"

उनके इस व्याख्यान के बाद एक सवाल–जवाब का सत्र हुआ जिसमें सिक्योंग ने विद्वानों द्वारा पेश संदेहों और टिप्पणियों पर अपना जवाब दिया।

सिक्योंग डॉ. लोबसांग सांगे का विदेशों में स्थित चीनी विद्वानों और बुद्धिजीवियों के साथ बहुत गहरा रिश्ता है क्योंकि वह 1990 के दशक से ही डॉ. यांग जियानली के साथ मिलकर चीन–तिब्बत संवाद के आयोजन के द्वारा चीनी विद्यार्थियों और आम जनता तक पहुंच बनाने वाले पहले तिब्बतियों में से हैं।

यह संवाद भी चीनी और तिब्बती जनता के बीच पारस्परिक भरोसा एवं विश्वास को बढ़ाने और तिब्बत मसले का कोई सकारात्मक समाधान निकालने के लिए सिक्योंग डॉ. लोबसांग सांगे के अनवरत प्रयास का ही हिस्सा है। ◆

तिब्बतियों के विदेश जाने पर चीन ने लगाई रोक

(तिब्बतनरीव्यू डॉट नेट, 24 मई, 2015)

चीन ने तिब्बती नस्ल के सभी लोगों के, चाहे वे कहीं के हों, 20 मई से 15 जुलाई के बीच पैकेज टूर लेकर विदेश यात्रा करने से मना कर दिया है। रेडियो फ्री एशिया मंदारिन सेवा द्वारा 22 मई को यह खबर दी गई।

कई वेबसाइट की खबरों से भी यह बात साफ हो रही है जिनमें यह कहा गया कि चेंगदू नगर निगम पर्यटन कार्यालय ने सभी ट्रैवल एजेंटों को एक निर्देश जारी किया है कि वे तिब्बती इलाके में रहने वाले नागरिकों–तिब्बती नस्ल के सभी लोगों, चाहे वे किसी मूल के भी हों– के लिए चीन से बाहर जाने वाले पैकेज टूर का ऑर्डर स्वीकार न करें। आरएफए के एक पत्रकार ने जब संभावित ग्राहक बनकर पा. सपोर्ट रखने वाले अपने एक तिब्बती दोस्त को भी साथ ले जाने का प्रस्ताव रखा तो सिचुआन प्रांत की राजधानी चेंदगू में गुआंडा इंटरनेशनल ट्रैवल एजेंसी के एक कर्मचारी ने कहा, "फिलहाल हम तिब्बतियों को नहीं ले जा रहे।"

चेंगदू के हुआंगिक्यू इंटरनेशनल ट्रैवल एजेंसी के एक कर्मचारी ने भी फोन पर ऐसा ही जवाब दिया। खबर के अनुसार बीजिंग और अशांत उत्तर–पश्चिमी इलाके सीक्यांग प्रांत की क्षेत्रीय राजधानी उरुमकी के कई ट्रैवल एजेंसियों के कर्मचारियों ने भी बताया कि तिब्बतियों की विदेश यात्रा के बारे में ऐसे ही आदेश हासिल हुए हैं। हालांकि, अभी वैध पासपोर्ट रखने वाले उइगर को अभी देश से बाहर जाने की इजाजत मिली हुई है और उन्हें जाने दिया जा रहा है।

चीन ने वर्ष 2008 में तिब्बत में हुई जनक्रांति प्रदर्शनों के बाद तिब्बतियों को पासपोर्ट जारी करने पर सख्त अंकुश लगा दिया है। वर्ष 2012 में सभी तिब्बतियों के पासपोर्ट जब्त कर लिए गए थे। उस साल बड़ी संख्या में तिब्बती परमपावन दलाई लामा के एक बड़े धार्मिक उपदेश कार्यक्रम में सम्मिलित होकर भारत से लौटे थे। जो लोग इस उपदेश कार्यक्रम से लौटे थे उन्हें महीनों तक जबरन राजनीतिक शिक्षा दी गई और जो लोग अवैध तरीके से भारत चले गए थे, उन्हें पकड़ जाने पर घर वापस नहीं आने दिया गया। ◆

तिब्बत समर्थक संगठन ने तिब्बत आंदोलन को हमेशा समर्थन देने का आह्वान किया

(आइटीसीओ, 11 मई, 2015)

राष्ट्रीय स्तर के तिब्बत समर्थक संगठन भारत–तिब्बत सहयोग मंच ने इंस्टीट्यूट ऑफ लांग लाइफ लर्निंग के सहयोग से "भारत की विदेश नीति के नए संकेत और तिब्बत समस्या" विषय पर 8 मई को दिल्ली विश्वविद्यालय के आइएलएलएल हॉल में एक सेमिनार का आयोजन किया।

इस कार्यक्रम में सभी कार्यक्षेत्रों के करीब 200 लोग शामिल हुए जिनमें खासकर प्रोफेसर, वकील, सामाजिक कार्यकर्ता, तिब्बत समर्थक संगठन और राजनीति विज्ञान के विद्यार्थी शामिल थे।

भारत–तिब्बत सहयोग मंच के संरक्षक श्री इंद्रेश कुमार को उपस्थित लोगों को संबोधित करने के लिए मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। अपने भाषण में उन्होंने हाल में नेपाल, पूर्वी भारत, तिब्बत और भूटान में आए विनाशक भूकंप से जान गंवाने और घायल हुए लोगों के प्रति शोक संवेदना एवं सहानुभूति प्रकट की।

सेमिनार के विषय पर बोलते हुए उन्होंने कहा कि चीन कभी भी भारत का पड़ोसी नहीं रहा है। भारत और चीन सीमा पर एक–दूसरे के करीब तब ही आए, जब चीन ने 1959 में तिब्बत पर कब्जा कर लिया। चीनी राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार भी यह मानते हैं कि तिब्बत, चीन का हिस्सा नहीं रहा है क्योंकि वह चीन की महान दीवार के अंदर नहीं है।

उन्होंने कहा कि चीन ने न केवल 1959 में तिब्बत पर कब्जा किया, बल्कि उसने , भारतीय हिमालयी क्षेत्र के कुछ हिस्सों पर अपना दावा करते हुए 1962 में भारत पर भी हमला कर दिया, 1954 में भारत–चीन के बीच हुए प्रसिद्ध पंचशील समझौते के ठीक बाद।

चीन ने तिब्बत के उन इलाकों में सड़कें और रेलमार्ग बनाए हैं, जो भारतीय सीमा और कैलाश–मानसरोवर को जोड़ते हैं। वास्तव में उनकी सोच साम्राज्यवादी विस्तार की है, जिससे कि देश की राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा है।

भारत को चीन से कहना चाहिए कि तिब्बत, चीन का हिस्सा नहीं है। इसलिए तिब्बत मसले पर वाजिब चिंता दिखाना भारत के अपने हित में है। तिब्बत में वर्ष 2009 से ही अब तक 130 तिब्बती भाइयों एवं बहनों ने तिब्बत में परमपावन दलाई लामा की वापसी और धार्मिक एवं सांस्कृतिक आज़ादी की मांग करते हुए आत्मदाह कर लिया है।

उन्होंने श्रोताओं को एक वाकया याद करते हुए बताया कि एक बार में परमपावन दलाई लामा के साथ थे, जब उनसे एक सवाल पूछा गया कि क्या तिब्बत कभी आज़ाद होगा। परमपावन ने जवाब दिया कि यदि इस महान देश के नेता, विशेषज्ञ, विचारक, राजनीतिज्ञ और लोग मिलकर भारत को एशिया का अगुआ राष्ट्र बना दे, तो तिब्बत जल्द ही आज़ाद हो जाएगा।

बीटीएसएम के कार्यवाहक अध्यक्ष डॉ. कुलदीप अग्निहोत्री ने अपने भाषण में बताया कि इस तिब्बत समर्थक संगठन की स्थापना श्री इंद्रेश कुमार जी के मार्गदर्शन में 15 वर्ष पहले हुई थी। उनके नेतृत्व में संगठन ने भारत की जनता और नीति नियंताओं को तिब्बत मसले पर जागरूक और जानकार बनाया। जब तक इस समस्या का समाधान नहीं हो जाता, तब तक हम सबको तिब्बत आंदोलन का समर्थन करना चाहिए।

भारत–तिब्बत समन्वय केंद्र के समन्वयक श्री जिग्मे सुलत्रिम ने आइटीसीओ और पूरे भारत में तिब्बत समर्थक संगठनों द्वारा चलाए जा रहे कार्यक्रमों के बारे में लोगों को संक्षिप्त जानकारी दी। उन्होंने तिब्बत पर इतना महत्वपूर्ण सेमिनार आयोजित करने के लिए बीटीएसएम की दिल्ली इकाई की सराहना की। उन्होंने तिब्बत के भीतर के गंभीर हालत के बारे में भी बताते हुए कहा कि चीन वहां नदियों की धाराओं को मोड़ने के लिए बड़े पैमाने पर बांध बना रहा है, जिनका निचली जलधाराओं पर सीधा असर पड़ता है। उन्होंने तो यहां तक कहा कि हिमालयी क्षेत्र में हाल में जो प्राकृतिक आपदा आई है, वह दुनिया की छत कहे जाने वाले तिब्बती पठार के भारी दोहन का नतीजा है।

भारत–तिब्बत सहयोग मंच के दिल्ली के अध्यक्ष श्री पंकज गोयल ने मंच पर उपस्थित अतिथियों का स्वागत करते हुए अपनी संस्था द्वारा 2014–15 में चलाए गए कार्यक्रमों और गतिविधियों की संक्षिप्त जानकारी दी। उन्होंने कहा कि यह संगठन 'तिब्बत की मुक्ति भारत की सुरक्षा' और 'कैलाश मानसरोवर की मुक्ति, भारत की सुरक्षा' के लिए प्रभावी तरीके से काम कर रहा है।

इस कार्यक्रम की अध्यक्षता दिल्ली विश्वविद्यालय के साउथ कैम्पस के निदेशक डॉ. उमेश राय ने की। ◆

नेपाल के विनाशक भूकंप ने चीन के तिब्बत में बांध बनाने की विलासिता के जोखिम को उजागर किया

ग्विन गुइलफोर्ड

(क्वार्ट्ज 14 मई, 2015)

नेपाल में तबाह करने वाले 25 अप्रैल के भूकंप से, जिसमें हजारों लोग मारे गए, एक विशाल पनबिजली बांध में दरार आ गया है और कई अन्य को भारी नुकसान हुआ है। हालांकि, अब इसका नतीजा और बुरा हो सकता है। ऐसा एक बांध अगर टूटा तो निचली जलधाराओं के पास स्थित देशों में जल और कीचड़–मलबे की बाढ़ जैसी स्थिति आ सकती है, जैसा कि इसाबेल हिल्टन ने न्यूयॉर्कर में बताया है–यह चिंताजनक स्थिति इसलिए दिखाई जा रही है क्योंकि हिमालयी घाटी में 400 से ज्यादा बांध बनाए जा रहे हैं या बनाए जाने की योजना है।

यह चीन द्वारा तिब्बत की नदियों पर बांध बनाने में हाल में आई तेजी के खतरे को रेखांकित करता है। प्राकृतिक संसाधनों की कमी के जोखिम को देखते हुए चीन सरकार को बांध बनाने का जुनून सवार हो गया है। आज स्थिति यह है कि अकेले चीन में पनबिजली उत्पादन की जितनी स्थापित क्षमता है, उतनी उससे निचले पायदान पर स्थित तीन देशों की मिलाकर भी नहीं है।

लेकिन चीन सरकार ने तो अभी तिब्बत से बहने वाली हिमालयी हिमनदियों की धाराओं से तैयार बिजली का दोहन ही शुरू ही किया है। इनमें से सबसे बड़ी यारलुंग नदी (यारलुंग सांगपो) तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र के निचले एक तिहाई हिस्से को काटते हुए अचानक बिल्कुल दाहिने मुड़कर भारत और बांग्लादेश में चली जाती है, जहां इसे ब्रह्मपुत्र कहा जाता है। नवंबर 2014 में चीन सरकार ने तिब्बत के पहले वास्तव में बहुत विशाल पनबिजली परियोजना (जिस पर 1.6 अरब डॉलर की लागत आई है) का अनावरण किया। झांगमु बांध के नाम से बनने वाली यह परियोजना यारलुंग नदी के बीच वाले हिस्से पर फैली हुई है।

दुर्भाग्य से ज्यादातर हिमालयी घाटी की तरह ही यारलुंग नदी की तलहटी असामान्य भूगर्भीय सक्रियता वाली है। इससे भी बदतर बात यह है कि बांध का जलाशय 100 से ज्यादा भूकंप से जुड़ा हुआ है, इनमें सबसे खतरनाक सिचुआन के निकट 2008 में आया भूकंप था, जिसमें 80,000 से ज्यादा लोग मारे गए थे।

इतना जोखिम क्यों लिया जा रहा है? चीन सरकार का कहना है कि पनबिजली परियोजनाओं से तिब्बत की बिजली की तंगी की समस्या दूर हो जाएगी। लेकिन यह स्पष्ट नहीं है कि क्या तिब्बती वास्तव में ऐसा चाहते हैं। सिचुआन भूगर्भ विज्ञान एवं खनिज ब्यूरो के भूगर्भ वैज्ञानिक और मुख्य इंजीनियर फान शियाओ ने चाइनाडायलॉग को बताया कि यारलुंग नदी के आसपास का इलाके में बहुत कम लोग रहते हैं और वहां की अर्थव्यवस्था इतनी छोटी है कि उसे इतनी बिजली की जरूरत ही नहीं है। अगर थोड़ा–सी भी गणना करें तो यह बात सही लगती है। झांगमु बांध से हर साल 2.5 अरब किलोवॉट बिजली पैदा होगी। यह तिब्बत में खपत होने वाले कुल बिजली का करीब 80 फीसदी है और इसके अलावा यारलुंग नदी में दूसरी जगहों पर भी चार बांध बनाए जा रहे हैं।

संभवतः वहां रहने वाले चरवाहों से ज्यादा खनन कंपनियों को बिजली की जरूरत है। तिब्बत के प्रचुर प्राकृतिक संसाधनों में से एक बड़ा हिस्सा सोने और तांबे के खदानों का है जो यारलुंग नदी पर बने या बन रहे बांधों के बहुत करीब हैं।

हिमालय क्षेत्र में बनने वाली इस बिजली के अन्य लाभार्थी चीन के ऊर्जा की तंगी से जूझने वाले पूर्वी प्रांत हो सकते हैं। तिब्बत में समचे चीन की महज 0.25 फीसदी जनसंख्या ही रहती है, लेकिन उसमें चीन के कुल जल संसाधनों का करीब एक तिहाई हिस्सा है। चीन सरकार की लंबे समय से यह योजना है कि तिब्बत को पश्चिम–पूर्व बिजली ट्रांसमिशन प्रोजेक्ट का केंद्र बना दिया जाए, जिससे चीन के संसाधन भरे पश्चिमी क्षेत्र से ऊर्जा समुद्रतटीय प्रांतों तक पहुंच सके, जो कि संसाधनों की तंगी वाले हैं और औद्योगीकरण से भी अछूते हैं। विल्सन सेंटर के चीन पर्यावरण मंच के नक्शे को देखकर यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि यह योजना कैसे काम करेगी।

इससे यह संकेत मिलता है कि चीन के तिब्बत में बांध बनाने के पागलपन के पीछे कितना कुरूप अवसरवाद है। अगर एक भी भूकंप से कोई बांध टूटा तो इससे कई तिब्बत बर्बाद हो सकते हैं। दुर्भाग्य से इस सस्ते बिजली खेल का असली विजेता यह सब अनुभव करने से बच जाएगा। ◆

आतंकवाद को खत्म करने के लिए अंतर–धार्मिक संवाद महत्वपूर्ण : दलाई लामा

(असाही शिमबुन, गिफु, 3 मई, 2015)

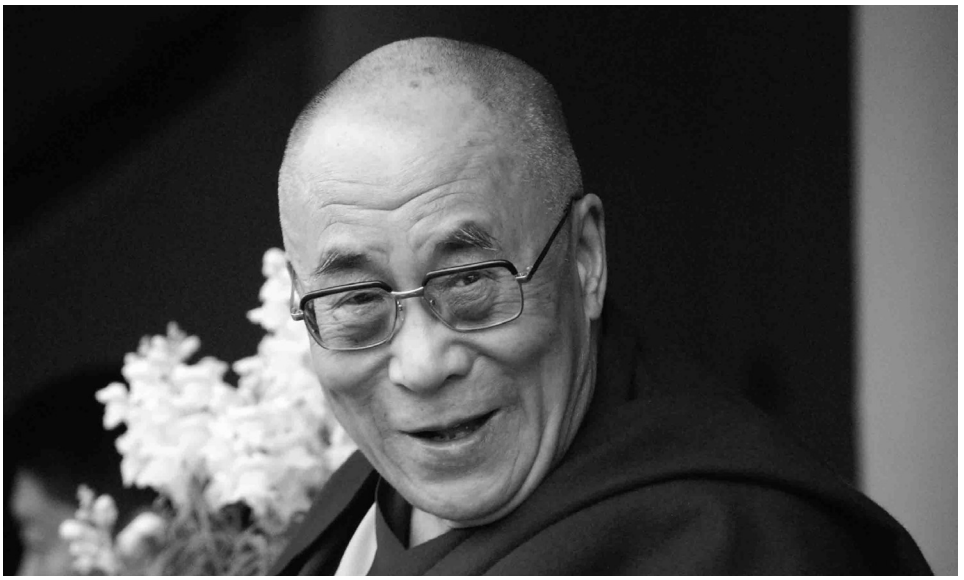

तिब्बत के निर्वासित आध्यात्मिक नेता दलाई लामा ने कहा है कि धर्म के नाम पर चल रहा आतंकवाद शीतयुद्ध के बाद की दुनिया द्वारा सामना की जाने वाली 'बहुत दुःखद' सच्चाई है और उन्होंने धार्मिक नेताओं से आह्वान किया कि वह हिंसा की श्रृंखला को रोकने के लिए अंतर–धार्मिक संवाद को बढ़ावा दें।

अप्रैल की शुरुआत में गिफू शहर में द अशाही शिमबुन को दिए एक खास इंटरव्यू में 79 वर्षीय सम्मानित बौद्ध भिक्षु ने कहा कि लोगों को दूसरे धर्मों का सम्मान करना चाहिए और यह देखने की कोशिश करनी चाहिए कि हर कोई "एक ही ईश्वर की संतान" है, जैसा कि सभी धर्मों में कहा गया है। वर्ष 1989 में नोबेल शांति पुरस्कार हासिल करने वाले दलाई लामा ने कहा, "तीसरे विश्वयुद्ध का खतरा, परमाणु हमलों के साथ, मैं समझता हूं कि बुनियादी रूप से बहुत दूर नहीं है। इसके बाद आजकल एक दुखद बात यह है कि हिंसा में धार्मिक विश्वास को भी शामिल कर लिया गया है, और मैं समझता हूं कि यह बहुत दुःखद है।"

उन्होंने कहा, "आपने एक धर्म, एक सत्य की अवधारणा देखी है। मैं समझता हूं कि हम तिब्बती भी कई बार यह मान लेते हैं कि बौद्ध धर्म ही एकमात्र सत्य है। जब हम ज्यादा बाहर जाते हैं, हमारा विभिन्न धर्मों के लोगों और विभिन्न धार्मिक परंपराओं से व्यापक संपर्क बनता है, तब हमें यह एहसास होता है कि दुनिया में और भी कई धार्मिक परंपराएं हैं।

दलाई लामा ने कहा कि धार्मिक टकराव न केवल मध्य–पूर्व में बढ़ रहा है, बल्कि म्यामांर और श्रीलंका जैसे बौद्ध देशों में भी, जहां मुस्लिम अल्पसंख्यकों को निशाना बनाकर हिंसक हमले हुए हैं।

सम्मानित भिक्षु ने कहा कि उन्होंने एक बार इस मसले पर म्यांमार की लोकतांत्रिक नेता आंग सान सू की से बात की थी। 1991 में नोबेल शांति पुरस्कार विजेता सू की ने यह स्वीकार किया था कि यह मसला काफी जटिल है।

उन्होंने कहा, "विभिन्न धार्मिक परंपराएं, वास्तव में हजारों वर्षों से मानवता की मदद करती रही हैं (और आगे भी करती रहेंगी)...इससे भविष्य में भी करोड़ों लोगों को गहरी प्रेरणा मिलती रहेगी। इसलिए हमें यह स्वीकार करना होगा कि कई सत्य हैं और कई धर्म हैं, इसके बाद मैं यह समझता हूं कि धर्म पर टकराव अपने आप कम हो जाएगा।"

उन्होंने यह भी कहा कि बौद्ध धर्म एवं एकेश्वरवादी धर्मों में दार्शनिक रूप से अंतर है। उन्होंने कहा कि उन्हें ऐसा लगता है कि एकेश्वरवादी ईश्वर की अवधारणा संपूर्ण मानवता के प्रति प्यार बढ़ाने में काफी मददगार हो सकती है। उन्होंने कहा, "आज के शत्रु भी ईश्वर की रचना हैं–वह भी ईश्वर संतान हैं। इसलिए यदि आप अपने दुश्मनों के प्रति नाराज होते हैं तो अंततः आप ईश्वर के प्रति ही नाराजगी दिखाते हैं।"

तिब्बती भिक्षु ने इस बात पर भी जोर दिया कि दुनिया भर में पाई जाने वाली हिंसा के दुष्चक्र को तोड़ने के लिए एक मात्र रास्ता संवाद ही है। उन्होंने कहा, "सेना और हिंसा के द्वारा आप कुछ हिस्से को नष्ट कर सकते हैं, लेकिन इससे समस्या नहीं सुलझेगी। हिंसा से असल में मानव शरीर को नियंत्रित किया जा सकता

है, दिमाग को नहीं।" उन्होंने कहा, "यह बहुत कठिन है, लेकिन अहिंसक तरीके का सहारा लें, लोगों से मिलें, बात करें, तो शायद बहुमत एक दिन अपना रवैया बदल लेगा। यह मेरा मानना है।"

उन्होंने दुनिया भर के धार्मिक नेताओं से आग्रह किया कि वे धार्मिक अतिवादियों, यहां तक कि आतंकवादी संगठनों के सदस्यों को अंतर–धार्मिक सम्मेलनों में बुलाएं ताकि दीर्घकालिक रणनीति के रूप में संवाद को बढ़ावा मिले और उन्हें हिंसा से दूर रहने के लिए राजी किया जा सके।

उन्होंने कहा कि उन्हें अब भी इस बात का दुख है कि 11 सितंबर, 2011 के आतंकवादी हमलों की अमेरिका की प्रतिक्रिया की वजह से इराक और अफगानिस्तान में युद्ध हुआ और अंततः इस्लामिक स्टेट चरमपंथी संगठन का उभार हुआ।

वर्ष 2001 के आतंकी हमलों के अगले ही दिन दलाई लामा ने अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू बुश को एक पत्र भेजकर उनसे आग्रह किया कि वह इसका प्रतिकार हिंसा से न करें क्योंकि इससे और हिंसा बढ़ेगी ही।

अंतर–धार्मिक संवाद को बढ़ावा देने के अपने प्रयासों के अलावा उन्होंने कहा कि दीर्घकालिक स्तर पर शिक्षा समाज से अंतर–धार्मिक टकराव को मिटाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

उन्होंने कहा, "शिक्षा किसी के रवैये को ज्यादा व्यावहारिक बनाती है क्योंकि इससे ज्ञान मिलता है, समग्र तस्वीर का ज्ञान।" उन्होंने कहा, "एक बार जब आप समग्र तस्वीर, सच्चाई को देख पाते हैं तो आपका कार्य व्यावहारिक हो जाता है।"

दलाई लामा ने कहा कि दुनिया को एक ऐसे सार्वदेशिक संगठन की जरूरत है जो संयुक्त राष्ट्र से अलग हो, क्योंकि संयुक्त राष्ट्र केवल दुनिया की सरकारों के लिए बोलता है, जनता के लिए नहीं। उन्होंने कहा, "हमें कोई ऐसी संस्था चाहिए जो वास्तव में मानवता का प्रतिनिधित्व करे, जिसके द्वारा वैज्ञानिक, लेखक और रिटायर्ड नेता दुनिया के सात अरब लोगों की आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करें।" ◆

(इसके लेखक केंतारो इसोमुरा और तेत्सुओ कोगुरे हैं।)

जब दलाई लामा 80 वर्ष के हो जाएंगे

(द स्टेट्समैन, 26 मई, 2015)

मेजर जनरल (रिटा) विनोद सहगल

तिब्बती कैलेंडर के अनुसार दलाई लामा 21 जून को ही 80 वर्ष के हो जाते हैं, जबकि दुनिया भर में प्रचलित ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार यह तिथि 6 जुलाई को आती है। तिब्बत में रहने वाले तिब्बतियों और जिन्हें अपने मातृभूमि को छोड़कर दुनिया के अन्य हिस्सों में रहने, सबसे बड़ी संख्या में भारत जहां 1959 में ल्हासा छोड़ने के बाद दलाई लामा ने सबसे पहले शरण मांगी, तिब्बतियों के लिए उनका दीर्घायु रहना जरूरी है। उनके उत्तराधिकारी के बारे में काफी कुछ लिखा जा चुका है। इस आलेख में मेरा इरादा उस विवाद में जाने का नहीं है। दलाई लामा ने अपने एक बयान में कहा था कि अब वह कुछ समय तक शांत रहना चाहते हैं। जो भी हो, चीनी नेतृत्व द्वारा उनको मात देने का खेल खत्म होता नहीं दिख रहा। चीन ने यह सुनिश्चित करने में कोई करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है कि भारत सरकार उन्हें अपनी जमीन से कोई राजनीतिक गतिविधि न करने दे। कई तरह के और अंकुश भी लगाए गए हैं।

चीन सरकार द्वारा दुनिया भर की सरकारों पर इस बात के लिए भारी दबाव डाला गया है कि जब दलाई लामा किसी देश में जाते हैं तो कोई उनका स्वागत न करे–औपचारिक या

अनौपचारिक। दक्षिण अफ्रीका में कुछ ऐसा ही हुआ, वहां की सरकार द्वारा दलाई लामा को वीजा देने से इंकार करने की वजह से एक अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन को रद्द कर देना पड़ा, क्योंकि इसमें शामिल होने वाले अन्य प्रतिनिधियों ने दक्षिण अफ्रीका सरकार के इस निर्णय पर आपत्ति जताई। अब दुनिया भर की सरकारें चीन के प्रभाव में दब जा रही हैं और समय–समय पर इसी तरह के हुक्मनामे का पालन कर रही हैं।

जिन सरकारों को धमकियां मिल रही हैं, वे कोई गरीब या कमजोर देश नहीं हैं, बल्कि इस धरती की कई ताकतवर सरकारों में से हैं, पश्चिमी देशों की सरकारें और मानवाधिकारों और नागरिकों की आजादी के अगुआ माने जाने वाले देश भी।

यह बेहद दुखद है कि संयुक्त राष्ट्र संघ के 194 देशों में से 90 फीसदी से ज्यादा इस संबंध में चीनी मांग का अनुपालन करते दिख रहे हैं। इनमें से बहुमत देश तिब्बती आध्यात्मिक प्रमुख को वीजा देने से भी इंकार करते रहे हैं। यह दुनिया भर में एक तरह से अपनी राष्ट्रीय संप्रभुता को स्वतः क्षीण करने जैसा ही है। कोई भी सुपरपावर अभी तक दुनिया के देशों के नेताओं पर अभी तक इस हद तक अपनी ताकत का इस्तेमाल नहीं कर पाया है।

जब दलाई लामा 80 साल के हो जाएंगे तो भारत सरकार का क्या रुख होगा, खासकर हाल में भारतीय प्रधानमंत्री की चीन यात्रा को देखते हुए यह सवाल खड़ा होता है। यह सवाल काफी प्रासंगिक है क्योंकि एक तो उत्तराधिकार का मसला है और दूसरे, दुनिया भर में दलाई के समर्थक इसे बेहद धूम–धाम से मनाएंगे। भारत सरकार भी संभवतः इसे धूमधाम से मनाए।

भारत सरकार या तो इस समारोह को नजरअंदाज कर सकती है, इसके बावजूद कि देश की बहुसंख्यक जनता उनका बहुत सम्मान करती है, या वह देश में अपना संप्रभुता बनाए रखने के लिए एक निर्णायक कदम उठा सकती है, जो कि उत्तरी पड़ोसी के लिहाज से पिछले छह दशकों में काफी हद तक कम ही देखा गया है।

राष्ट्रपति भवन में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के शपथग्रहण समारोह में अन्य सार्क नेताओं के साथ निर्वासित तिब्बती सरकार के प्रधानमंत्री लोबसांग सांगे को सीट देना वास्तव में एक साहसिक कदम था। अगला उचित कदम यह होगा कि दलाई लामा के 80वें जन्मदिन को राष्ट्रीय स्तर पर इस तरह से मनाया जाए कि पूरी दुनिया में उदाहरण बन जाए। चीन की तथाकथित संवेदनशीलता को तवज्जो देने की जरूरत नहीं है क्योंकि भारत सरकार जो भी निर्णय करती है, यह उसका आंतरिक मामला है।

इस युग के सबसे सम्मानित आध्यात्मिक नेता का सम्मान कर सरकार भारत की जनता का सम्मान करेगी और गांधीवादी तरीके से ही तिब्बत की जनता को एक नई उम्मीद दे पाएगी। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि वैश्विक स्तर पर भारत की प्रतिष्ठा में कई गुना बढ़ोतरी हो जाएगी। अब समय आ गया है कि उन कृत्रिम बेड़ियों से छुटकारा पाया जाए जिससे भारत अपने आंतरिक मामलों में भी कदम नहीं बढ़ा पाता कि कहीं हिमालय के पार का देश नाराज न हो जाए। नीचे इस लेखक द्वारा लिखे गए एक लेख 'दलाई लामा–द मैन ऐंड हिज विजन' का एक अंश दे रहे हैं। यह लेख मैंने तब लिखा था, जब दलाई लामा 65 वर्ष के हो गए थे।

"बार–बार देशों की नियति उनके नेताओं द्वारा आकार लेती रही है। क्या अपने आग्रहों से बंधे नेता देशों की नियति तय करेंगे या नियति देशों का उपहास करते हुए उन नेताओं को उखाड़ फेकेगी, जो उसके मुताबिक चलते हैं?

सच जो भी, तथ्य तो यही है कि नियति भले बदली न जा सके, लेकिन उसके भरोसे नहीं रहा जा सकता। न ही इतिहास को लिखे बिना छोड़ा जा सकता। जो लोग यह मानते हैं कि सब कुछ पहले से निर्धारित होता है, उन्हें यह जिज्ञासा करनी छोड़ देनी चाहिए कि नियति किधर ले जा रही है, अपने लिए और अपने देश के लिए भी। खतरनाक रास्ते पर चलने वाले यात्री को अपने समय की दुविधाओं का सामना करना चाहिए जिनका अनादि काल से ही कोई वास्तव में कोई संतोषजनक जवाब नहीं मिल पाया है। कोई भी व्यक्ति, शायद दलाई लामा भी नहीं, इनके जवाब नहीं जानता है, लेकिन वह यह जानता है कि अस्तित्व के साथ ही यह तय हो जाता है कि संघर्ष खुद जीवन, कर्म या लीला है।"

"बुद्ध का यह अनुयायी स्वाभाविक रूप से हिंसा को नकारता है। उन्होंने गांधी की अवधारणा को एक नया आयाम दिया है। वह परिस्थिति की वास्तविकता के साथ समायोजन करने के लिए तैयार हैं। वह चीनी संविधान के तहत ही तिब्बत को स्वायत्तता मिल जाने से संतुष्ट होंगे। चौदहवें दलाई लामा ने शुरुआत तिब्बतियों के एक नेता के रूप में की थी, उनकी उम्मीदों और आकांक्षाओं के आश्रयस्थल के रूप में, इस दुनिया के लिए और इससे आगे की दुनिया के लिए भी। पिछले दशकों में उनका कद एक विश्व नेता के रूप में उभरा है जो एक ज्यादा मानवीय विश्व व्यवस्था बनाने के लिए मानवता के अग्रिम मोर्चे पर रहा है और दुनिया के करोड़ों लोग उनसे प्रेरणा लेते हैं। उनका आंदोलन अब सिर्फ कुछ लाख तिब्बतियों की विशिष्ट संस्कृति को बचाने का ही आंदोलन नहीं है। तिब्बत के सवाल को संभवतः अब सिर्फ राजनीतिक धरातल पर हल नहीं किया जा सकता, जहां यह दुःसाध्य साबित हुआ है और आगे भी ऐसा रह सकता है। अब इस मसले को ऐसे धरातल पर हल करने की ईमानदार कोशिश करनी चाहिए जिसमें कोई भी तंत्र या राजनीतिक ईकाई इस प्रक्रिया से खुद को अलग–थलग महसूस न करे।"

भारतीय प्रधानमंत्री के पास यह ऐतिहासिक अवसर है कि हिमालय पार के अपने साथी से कहें कि वह रेशम मार्ग पर विचार करते हुए सीमा विवाद को हल करने की कोशिश करे। आखिर उन्होंने चीन में पहला कदम शियान के गूज पैगोडा की यात्रा के साथ ही रखा था। 21वीं सदी का रेशम मार्ग ऐसा होगा जो नई दिल्ली–काठमांडू–ल्हासा–बीजिंग को जोड़ते हुए दो महान प्राचीन सभ्यताओं के सांस्कृतिक विरासत का संग्रहण करेगा। उन्होंने भारत आने वाले चीनी यात्रियों के लिए ई–वीजा की शुरुआत कर इसका बीजारोपण कर दिया है। ◆

भारत और चीन यदि शांतिपूर्ण रिश्ते रखना चाहते हैं, तो तिब्बत को नजरअंदाज नहीं कर सकतेः तिब्बती प्रधानमंत्री

डॉ. लोबसांग सांगे ने तिब्बत में चीनी दमन और हाल में हुए मोदी के चीन दौरे के बारे में की बात।
(एजाज अशरफ, द स्क्रॉल, 23 मई, 2015)

निर्वासित तिब्बती सरकार के प्रधानमंत्री डॉ. लोबसांग सांगे ने दिल्ली विश्वविद्यालय और हार्वर्ड लॉ स्कूल से शिक्षा हासिल की है। ई–मेल से दिए एक इंटरव्यू में वह बताते हैं कि आखिर किस प्रकार प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की हाल में चीन यात्रा के दौरान तिब्बत का मसले और बीजिंग की दमनकारी नीति के बारे में चर्चा मीडिया कवरेज से दूर ही रहा। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की हाल की चीन यात्रा से कुछ दिनों पहले तक और बाद में तिब्बत का मसला काफी हद तक भारतीय मीडिया से गायब ही रहा। इस तरह चीन को यह आभास हो गया है कि भारत–चीन रिश्तों की बेहतरी का केंद्र तिब्बत में ही है।

क्या आप मानते हैं कि भारतीय मीडिया और भारत के विदेश नीति प्रतिष्ठान ने इस विचार को अपना लिया है कि चीन के सामने तिब्बत मसले को उठाना भारत के हितों के खिलाफ है?

चीन सरकार दुनिया भर की सरकारों पर यह दबाव बना रही है कि वे दलाई लामा से न मिलें या तिब्बत मसले पर कुछ न बोलें। लेकिन यह ध्यान रखने की बात है कि यदि भारत एवं चीन अपने बीच शांतिपूर्ण एवं मैत्रीपूर्ण रिश्ता चाहते हैं तो तिब्बत मसले से भागा नहीं जा सकता।

पिछले साल चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग की भारत यात्रा के दौरान दिल्ली में तिब्बतियों ने विरोध प्रदर्शन किया था। लेकिन मोदी की हाल की यात्रा के दौरान तिब्बती इतने शांत क्यों रहे?

तिब्बती समुदाय ने भारत सरकार से बार–बार यह आग्रह किया है कि बातचीत की मेज पर तिब्बत को मुख्य मसले के रूप में रखें, जैसे कि चीन, तिब्बत को प्रमुख मसलों में रखता है। तिब्बतियों को उम्मीद थी कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के सामने तिब्बत मसले की चर्चा करेंगे।

तो मोदी की हाल की यात्रा के दौरान तिब्बतियों की उम्मीद कितनी पूरी हुई? क्या इस यात्रा ने किसी भी तरह से तिब्बत आंदोलन को कोई मजबूती दी है?

प्रधानमंत्री मोदी की यात्रा मुख्यतः कारोबार पर केंद्रित थी। अभी यह कहना थोड़ी जल्दबाजी होगी कि इस यात्रा के दौरान तिब्बतियों की उम्मीद पूरी हुई है। हालांकि, भारत का फायदा, तिब्बत का फायदा है। मैं सरकार और भारत की जनता से लगातार यह आग्रह करता रहूंगा कि भारत–चीन संबंधों में तिब्बत को मुख्य मसला बनाएं।

चीन और भारत, दोनों यह गीत गाते रहे हैं कि बौद्ध धर्म भारत एवं चीन के बीच साझेदारी का सेतु है। क्या आपको लगता है कि चीन की तरफ से यह अतिशय पाखंड ही है, खासकर यह देखते हुए कि शासन का उसका तरीका दमनकारी है और वह तिब्बतियों के अधिकार देने में आनाकानी करता रहा है?

भारत और चीन के बीच बौद्ध धर्म पर आधारित एक साझा सांस्कृतिक बंधन है। तिब्बत का भी भारत से ऐसा ही संपर्क रहा है, जब शताब्दियों पहले भारतीय गुरु और तिब्बती विद्यार्थी हिमालय

पारकर एक–दूसरे के यहां आते–जाते थे। जैसा कि परमपावन दलाई लामा हमेशा कहते रहे हैं कि भारत गुरु है और तिब्बत चेला। भारत दक्षिण एशिया और दुनिया के अगुआ देशों में से है, इसलिए यह उसका नैतिक कर्तव्य है कि तिब्बतियों के अधिकारों के साथ ही दूसरे देशों में मानवाधिकार की स्थिति सुधारने में मदद करे। दूसरी तरफ, भारत पिछले 56 वर्षों में तिब्बती शरणार्थियों के लिए सबसे ज्यादा दयालु रहा है।

तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र में चीन सरकार के खिलाफ आत्मदाह द्वारा विरोध प्रदर्शन की शुरुआत फरवरी 2009 में हुई और 3 फरवरी, 2013 तक इसमें 100 लोगों की जान चली गई। क्या विरोध प्रदर्शन का यह तरीका रोका जा सकता था?

अब तक 139 तिब्बतियों ने आत्मदाह किया है। चीन सरकार तिब्बती नेतृत्व पर उंगली उठाती रही है कि इसके सूत्रधार हम हैं। केंद्रीय तिब्बती प्रशासन (निर्वासित तिब्बती सरकार) ने सभी तिब्बतियों से बार–बार यह अपील की है कि वे आत्मदाह जैसे कदम न उठाएं, लेकिन दुखद बात यह है कि तिब्बतियों ने खुद को आग लगाना रोका नहीं है। आत्मदाह करने वाले परमपावन दलाई लामा की स्वदेश वापसी और तिब्बत को आज़ादी देने की मांग करते रहे हैं।

तिब्बतियों की मातृभूमि की जो मौजूदा हालत है उससे गहरी होती पीड़ा और असंतोष ही तिब्बतियों को आत्मदाह के लिए उकसा रहा है। चीन की नीतियां बुरी तरह विफल रही हैं और इनकी वजह से तिब्बतियों को राजनीतिक दमन, सांस्कृतिक विलोपन, सामाजिक भेदभाव और आर्थिक रूप से हाशियाकरण का शिकार होना पड़ रहा है, साथ ही वहां पर्यावरण का भारी विनाश हो रहा है। इसलिए समाधान पूरी तरह चीन के हाथ में ही है।

अभी तिब्बत के लोगों को किस तरह की सांस्कृतिक और धार्मिक आज़ादी हासिल है?

चीन सरकार जनसांख्यिक रूप से तिब्बतियों को संकट में डाल रही है, चीनी श्रमिकों को तिब्बत में बसने को प्रोत्साहित किया जा रहा है। तिब्बती शहरों में चीनी प्रवासियों की बाढ़ आ जाने से तिब्बती सांस्कृतिक रूप से विलोपित होते जा रहे हैं। तिब्बती अपनी मातृभूमि में ही दूसरे दर्जे के नागरिक बनते जा रहे हैं। तिब्बत के बौद्ध मंदिरों और मठों को सत्तारूढ़ कम्युनिस्ट पार्टी का दुष्प्रचार केंद्र बनने को मजबूर किया गया है। तिब्बतियों को उनके बुनियादी मानवाधिकार से वंचित किया जा रहा है।

पिछले साल शी की भारत यात्रा के दौरान दलाई लामा ने भारतीयों को यह याद दिलाया था कि 'तिब्बत की समस्या' असल में 'भारत की समस्या' भी है। क्या आप समझा सकते हैं कि दलाई लामा के कहने का मतलब क्या है?

मैं दलाई लामा के इस कथन से पूरी तरह से सहमत हूं कि तिब्बत की समस्या, भारत की समस्या भी है। 1959 से पहले भारत और चीन के बीच कोई साझी सीमा ही नहीं थी। तिब्बत दो एशियाई महाशक्तियों के बीच एक बफर देश के रूप में था। इसलिए यदि भारत और चीन शांतिपूर्ण सीमा तथा मैत्रीपूर्ण द्विपक्षीय संबंध चाहते हैं, तो तिब्बत को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

तिब्बती राष्ट्रीय जनक्रांति की 53वीं वर्षगांठ पर अपने भाषण में आपने एक चीनी विद्वान को उद्धृत किया था जिनका कहना है कि 'ल्हासा में तिब्बतियों से ज्यादा चीनी, भिक्षुओं से ज्यादा पुलिस और खिड़कियों से ज्यादा निगरानी कैमरा हैं।' क्या आप बता सकते हैं कि तिब्बत में किस हद तक दमन हो रहा है?

वर्ष 2008 में शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शनों की शुरुआत और उसके बाद जारी आत्मदाह विरोध प्रदर्शनों के बाद से ही वहां एक तरह से पूरी तरह से घेराबंदी की स्थिति है। लोगों की आवाजाही पर बहुत ज्यादा अंकुश लगा दिया गया है और बड़े शहरी केंद्रों में जगह–जगह जांच चौकियां बनाई गई हैं। तिब्बतियों को इन चौकियों से गुजरने के लिए अपना पहचान पत्र स्वाइप करना पड़ता है, जिसमें अत्याधुनिक चिप लगे होते हैं और उनको लगातार कैमरे की निगरानी से गुजरना पड़ता है। एक तिब्बती इसे अपमान बताते हुए कहते हैं : "आपका पहचान पत्र आपकी छाया की तरह है। उसके बिना आप हिल भी नहीं सकते।" यहां तक कि चीनी पर्यटक भी टिप्पणी करते हैं कि तिब्बत की मौजूदा स्थिति एक युद्ध क्षेत्र जैसी है।

मध्यम मार्ग नीति पर, निर्वासित तिब्बती सरकार ने जिसकी पेशकश की है, चीन सरकार की क्या प्रतिक्रिया रही है?

मध्यम मार्ग नीति की पेशकश परमपावन दलाई लामा ने की थी, लेकिन इसे केंद्रीय तिब्बती प्रशासन द्वारा लोकतांत्रिक तरीके से स्वीकार किया गया है। मध्यम मार्ग नीति यथास्थिति और आज़ादी के बीच में खड़ी है–जिसमें तिब्बती जनता के प्रति चीन सरकार की मौजूदा दमनकारी और औपनिवेशिक नीतियों को पूरी तरह से खारिज किया गया है, जबकि चीन जनवादी गणतंत्र से अलग होने की बात भी नहीं कही गई है। हम जिस वास्तविक स्वायत्तता की मांग कर रहे हैं वह चीन जनवादी गणतंत्र के संवैधानिक ढांचे के भीतर ही होगा। यह सभी पक्षों के लिए फायदे की स्थिति है। पूरी दुनिया ने इसे वाजिब माना है।

कहा जाता है कि बीजिंग ने तिब्बतियों के साथ बातचीत इसलिए बंद कर दी है, क्योंकि वह दलाई लामा की मौत का इंतजार कर रहा है ताकि उनकी जगह कोई अपना नामित व्यक्ति बैठा सके और फिर अपने मनमाफिक समाधान पेश कर सके। क्या आपको लगता है कि उसका इस तरह का खेल चल पाएगा?

परमपावन दलाई लामा का पुनर्जन्म पूरी तरह से धार्मिक मामला है, जो कि केवल तिब्बतियों से जुड़ा मसला भी है। इसलिए यह बेहद हास्यास्पद है कि कम्युनिस्ट चीन अपना दलाई लामा नियुक्त करना चाहता है। परमपावन दलाई लामा ने हमेशा कहा है कि तिब्बत का आंदोलन 60 लाख तिब्बती जनता का आंदोलन है और यह तब तक चलता रहेगा, जब तक तिब्बती जनता के अधिकारों और गरिमा की बहाली नहीं हो जाती। ◆

(एजाज अशरफ दिल्ली के पत्रकार हैं। उनका एक उपन्यास 'द आवर बिफोर डॉन' हार्पर कोलिंस द्वारा प्रकाशित किया गया है।)

चीन में मोदी

(प्रोजेक्ट सिंडिकेट, नई दिल्ली, 18 मई)

ब्रह्मा चेलानी

चीन और भारत के बीच एक व्याकुलता वाला रिश्ता रहा है, जिसमें घृणित विवाद, गहरा अविश्वास और राजनीतिक सहयोग के बारे में मिलीजुली भावना देखी जाती है। बढ़ते द्विपक्षीय व्यापार, जिससे पुराने मनमुटाव को दूर करने में कोई मदद नहीं मिल रही, के साथ ही, सीमा पर घटनाएं, सैन्य तनाव और भू–राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता बढ़ती जा रही है, साथ ही साथ नदियों और समुद्र क्षेत्र के मसले पर असहमति भी।

पिछले साल पदभार ग्रहण करने के बाद भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कहा था कि वह चीन के साथ अपने देश के रिश्ते में बदलाव लाना चाहते हैं, उनका तर्क था कि एशिया का भविष्य काफी हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि दोनों देश–जिनकी जनसंख्या मिलाकर दुनिया की कुल जनसंख्या की करीब एक तिहाई होती है–"व्यक्तिगत रूप से आगे बढ़ें" और "साथ मिलकर काम करें"। लेकिन मोदी के हाल में संपन्न चीन दौरे से यह बात रेखांकित हो गई कि जनसंख्या के दो दिग्गजों को बांटने वाले मसले अब भी विकट बने हुए हैं।

यह जरूर है कि चीन के नेताओं ने मोदी का स्वागत बड़े ही स्टाइल में किया है। जब मोदी शियान–चीन की चार प्राचीन राजधानियों में से एक और राष्ट्रपति शी जिनपिंग का गृह नगर–पहुंचे तो शी उनको मूर्तियों के विशाल संग्रहालय दिखाने ले गए–मोदी को यह लगा कि शी के साथ उनकी दोस्ती बड़ी गहरी है। बीजिंग में प्रधानमंत्री ली केछ्यांग ने स्वर्ग मंदिर के बाहर मोदी के साथ एक सेल्फी खिंचवाई।

लेकिन चीन के नेताओं ने किसी महत्वपूर्ण मसले पर कुछ नहीं किया–जबकि मोदी जी की तरफ से इसमें कोई कोताही नहीं हुई। मोदी जी के व्यावहारिक और मेल–मिलाप की नीति के बावजूद, उनका यह अनुरोध अनसुना ही रह गया कि चीन उन कुछ मसलों पर "अपने रवैए पर पुनर्विचार करे" जो साझेदारी में अड़चन बन रहे हैं और जिनकी वजह से "संपूर्ण संभावनाओं" का दोहन नहीं हो पा रहा है।

लंबे हिमालयी सीमा पर जारी विवाद से संबंधित दोनों देशों के बीच चल रही चर्चाओं पर विचार करें। वर्ष 2006 से ही लगातार चीनी सैन्य अतिक्रमण की ओर संकेत करते हुए मोदी ने यह घोषणा की थी कि सीमा पर "अनिश्चितता का साया" मंडरा रहा है क्योंकि 1962 के युद्ध के बाद चीन ने मनमाने तरीके से जिस "वास्तविक नियंत्रण रेखा" का निर्धारण किया था, कभी भी दोनों पक्षों द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया। मोदी ने प्रस्ताव रखा कि एलएसी को स्पष्ट करने की प्रक्रिया फिर से शुरू की जाए, लेकिन इसका कोई फायदा नहीं हुआ।

वास्तव में लगातार जारी संशयात्मक स्थिति की वजह यह है कि करीब दो दशकों से ज्यादा की बातचीत के बाद चीन दो मुख्य विवादित क्षेत्रों (ऑस्ट्रेलिया के आकार के अरुणाचल प्रदेश और स्विट्जरलैंड के आकार के अक्साई चीन और इनके आसपास के इलाके जो हिमालय के दो छोर पर स्थित हैं) के बारे में भारत से नक्शों के आदान–प्रदान के अपने वायदे से वर्ष 2002 में फिर मुकर गया। इसके चार साल बाद चीन ने लंबे समय से दबी पड़ी अपनी मांग को फिर दोहरा दिया कि अरुणाचल प्रदेश उसका है और उसके बाद से उसने कई बार सीमा का अतिक्रमण किया है। उसने फरवरी माह में मोदी की अरुणाचल प्रदेश की यात्रा पर भारी नाराजगी प्रकट की।

इसके बावजूद, द्विपक्षीय संबंध सुधारने के उत्साह में मोदी ने यह घोषणा की कि चीनी पर्यटकों को अब भारत आने के लिए इलेक्ट्रॉनिक वीजा दिया जाएगा–अपने विदेश सचिव को गलत ठहराते हुए, जिन्होंने कुछ दिनों पहले ही मीडिया से कहा था कि ऐसा कोई निर्णय नहीं लिया गया। चीन के विदेश मंत्री ने इस कदम को एक "उपहार" बताया, जो कि बिल्कुल सही ही है क्योंकि इसके बदले में चीन ने कुछ भी नहीं दिया। इसके विपरीत चीन ने भारत की संप्रभुता पर चोट पहुंचाने की कोशिश की, अरुणाचल प्रदेश के निवासियों को नत्थी वीजा जारी कर।

इसके अलावा चीन– जो जल संसाधन भरे तिब्बत को हड़पकर इस इलाके का जल अधिपति बन चुका है–ने सीमा पार नदियों के जल विज्ञान संबंधी आंकड़े सिर्फ मानसून के समय ही नहीं बल्कि साल भर भारत को देने के एक समझौते पर दस्तखत करने से भी इंकार किया है। इस तरह चीन न केवल अपने किसी भी पड़ोसी से जल साझेदारी समझौते करने से इंकार कर रहा है, बल्कि वह नदियों के ऊपरी जलधाराओं के बारे में भी व्यापक आंकड़े साझा करने से इंकार करता रहा है।

मसलों को और जटिल बनाने वाला मोदी के दौरे पर जारी

संयुक्त बयान है जिसमें कहा गया है कि चीन ने "नाभिकीय आपूर्ति समूह में शामिल होने की भारत की आकांक्षा पर गौर किया है और वह सुरक्षा परिषद सहित संयुक्त राष्ट्र में भारत की ज्यादा भूमिका निभाने की आकांक्षा को समझता है तथा उसका समर्थन करता है।" गौरतलब है कि चीन एकमात्र दिग्गज देश है जिसने सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सीट का समर्थन नहीं किया है।

इसी तरह मोदी के दौरे के आर्थिक नतीजे भी असंतुलित ही हैं। शंघाई में कारोबारी दिग्गजों के साथ मोदी ने कई सौदे किए–करीब 22 अरब डॉलर के–जिसमें चीन के सरकारी बैंकों द्वारा भारतीय कंपनियों को चीनी उपकरण खरीदने के लिए कर्ज देने की बात है। इससे भारत का पहले से ही चीन के साथ चल रहा भारी व्यापार घाटा और बढ़ जाएगा, जबकि चीन का भारत का में निवेश मामूली ही बढ़ेगा, जो अभी सालाना द्विपक्षीय व्यापार अधिशेष का महज 1 फीसदी ही है– एक ऐसा अधिशेष जो मोदी के कार्यभार ग्रहण करने के बाद एक–तिहाई बढ़ गया है और अब 50 अरब डॉलर के करीब हो गया है।

वास्तव में भारत और चीन के बीच दुनिया का सबसे एकतरफा व्यापारिक रिश्ता है। चीन द्वारा भारत को होने वाला निर्यात उसके भारत से होने वाले आयात का पांच गुने से ज्यादा है। इसके अलावा चीन मुख्यतः भारत से कच्चा माल खरीदता है और यहां ज्यादातर मूल्यवर्धित सामान भेजता है। भारत ने अपने बाजार में सस्ते चीनी माल की बाढ़ को रोकने का बहुत कम प्रयास किया है–मोदी के बहुप्रचारित 'मेक इन इंडिया' अभियान के बावजूद। देश में आयात के सबसे बड़े स्रोत के रूप में चीन का दर्जा अब भी सुरक्षित है।

व्यापारिक और वाणिज्यिक पहुंच को दूसरे देशों में अपना प्रभाव बढ़ाने में इस्तेमाल करने में चीन को महारत हासिल है। जहां तक भारत की बात है, चीन बिजली और दूरसंचार उपकरण तथा सक्रिय फार्मा इंग्रेडिएंट के बड़े सप्लायर के अपने प्रभाव पर दांव लगा रहा है और इसका उल्लेख नहीं चाहता कि वह संकटग्रस्त भारतीय कंपनियों को कर्ज दे रहा है, जिससे भारत के पास विकल्प बहुत कम रह जाते हैं। व्यापार के एकतरफा प्रवाह की इजाजत देकर–जिसमें चीन को फायदा हो रहा है और वह बढ़ता जा रहा है– भारत प्रभावी तरीके से उसकी रणनीति को ही मजबूत कर रहा है।

मोदी अपने हाल के चीन दौरे को सकारात्मक दिखाने के लिए पूरा जोर लगा रहे हैं–24 प्रतीकात्मक समझौतों को प्रचारित किया जा रहा है जिन पर दस्तखत हुए हैं–लेकिन वह उन कठोर सामरिक सच्चाइयों से दूर नहीं जा सकते जो द्विपक्षीय संबंधों को प्रभावित कर रही हैं। रवैए में बदलाव किए बिना भारत–चीन रिश्ता काफी हद तक असमान और विवादग्रस्त ही बना रहेगा। ◆

(ब्रह्मा चेलानी, नई दिल्ली स्थित सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च में सामरिक अध्ययन के प्रोफेसर हैं तथा एशियन जगरनॉट, वाटरः एशियाज न्यू बैटलग्राउंड और वाटर, पीस ऐंड वारः कन्फ्रंटिंग द ग्लोबल वाटर क्राइसिस के लेखक हैं।)

चीन ने भाषा एवं संस्कृति के संरक्षण का आह्वान करने वाले एक लोकप्रिय तिब्बती गायक को जेल में डाला

(तिब्बतनरीव्यू डॉट नेट, 21 मई, 2015)

चीन ने अप्रैल के मध्य में एक लोकप्रिय तिब्बती गायक को जेल में डाल दिया। इस गायक पर आरोप था कि उन्होंने तिब्बती भाषा और संस्कृति को बचाने का आह्वान करने वाले गीत गाए थे। निर्वासित तिब्बती प्रशासन की वेबसाइट तिब्बत डॉट नेट पर 19 मई को यह खबर प्रकाशित हुई है। खबर के अनुसार नागछू प्रशासनिक क्षेत्र के ड्रिरु काउंटी में रहने वाले गोनपो तेनजिन को 15 अप्रैल को एक स्थानीय अदालत ने साढ़े तीन साल के लिए जेल की सजा सुना दी। उन्हें नवंबर 2013 में ही गिरफ्तार किया गया था और तब से कुछ पता नहीं चल पा रहा था कि उन्हें कहां रखा गया है।

चीनी प्रशासन ने उन्हें इतने लंबे समय तक गिरफ्तार रखने की कोई वजह नहीं बताई है। उनके परिवार द्वारा लगातार पूछताछ करने पर आखिरकार प्रशासन के लोगों ने उन्हें 'तिब्बत में कहां है नया साल?' शीर्षक वाला गीत गाने के लिए गिरफ्तार किया गया है। इस गीत में तिब्बती भाषा एवं संस्कृति की तारीफ की गई है और तिब्बती लोगों से इनके संरक्षण की अपील की गई है। बताया जाता है कि उन्हें लंबे समय तक कैद में रहने के दौरान बुरी तरह से प्रताड़ित किया गया।

गोनपो तेनजिन ड्रिरु काउंटी के शाकछू टाउनशिप के रहने वाले हैं। उनकी शादी हो चुकी है और बच्चे भी हैं। वह अपने बूढ़े मां–बाप के साथ रहते हैं।

ड्रिरु काउंटी तिब्बती इलाके के उन सबसे बुरी तरह दमन किए जाने वाले क्षेत्रों में से है। यहां के निवासियों ने सितंबर 2013 के चीन सरकार के उस आदेश के खिलाफ विद्रोह कर दिया गया था, जिसमें कहा गया था कि हर घर और धार्मिक इमारत पर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का झंडा फहराना होगा। इस विद्रोह के बाद ही दमन तेज हो गया। वहां के कई मठों को बंद कर दिया और चीनी शासन के प्रति राजभक्ति दर्शाने को मजबूर करने वाले राजनीतिक शिक्षा के क्लास तब से बदस्तूर जारी हैं। ◆

"भारत–चीन संबंधों में मुख्य मसला बना रहेगा तिब्बत, इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं"

(तहलका, 23 मई, 2015)

निर्वासित तिब्बती सरकार के सिक्योंग (प्रधानमंत्री) डॉ. लोबसांग सांगे ने कहा कि दुनिया ने वास्तविक स्वायत्तता की विश्वसनीयता को स्वीकार कर लिया है, जिसकी चीनी गणतंत्र के संवैधानिक ढांचे के भीतर तिब्बती जनता मांग कर रही है। उनसे खास बातचीतः

निर्वासित तिब्बती सरकार और तिब्बती जनता के लिए आगे का रास्ता क्या होगाः स्वाधीनता?स्वायत्तता? वास्तविक स्वायत्तता?जनमत? आत्मनिर्धारण? या यथास्थिति?

हम मध्यम मार्ग नीति के द्वारा चीन के भीतर ही वास्तविक स्वायत्तता देने की मांग करते रहेंगे। मध्यम मार्ग नीति का बीजारोपण 1970 के दशक में ही हुआ था और वास्तविक स्वायत्तता के हमारे प्रस्ताव से चीन और तिब्बत दोनों के लिए फायदा है। यह एक दूरदर्शी और यथार्थवादी कदम होगा।

श्वेतपत्र में कहा गया है कि आगामी दिनों में भी तिब्बत में "उच्च स्तर की स्वायत्तता" देने की कोई संभावना नहीं है। इस पर आप की टिप्पणी।

मध्यम मार्ग नीति न तो चीन जनवादी गणराज्य से अलग होने की बात करती है और न ही "उच्च स्तर की स्वायत्तता" मांगती है, इसमें तो बस सभी तिब्बती जनता के लिए एकल प्रशासन के तहत वास्तविक स्वायत्तता की मांग की गई है। यह राष्ट्रीय क्षेत्रीय स्वायत्तता कानून और चीन जनवादी गणराज्य के संविधान, दोनों के कानून के अनुरूप ही है। केंद्रीय तिब्बती प्रशासन (सीटीए) मध्यम मार्ग नीति के लिए प्रतिबद्ध है और यह दोहराता है कि तिब्बत मसले के परस्पर फायदेमंद समाधान निकालने के लिए संवाद ही सबसे व्यावहारिक तरीका और रास्ता है।

शिंनहुआ की खबर में श्वेतपत्र का जो विवरण दिया गया है उसमें कहा गया है कि दलाई लामा और उनके समर्थक तिब्बत की स्वाधीनता के आंदोलन को बढ़ाने के लिए लगातार हिंसा का सहारा ले रहे हैं, उन्होंने 2011 से चीन के भीतर रहने वाले तिब्बती लामाओं और सामान्य अनुयायियों को इस बात के लिए उकसाया है कि वे आत्मदाह करें। खबर के अनुसार श्वेतपत्र में कहा गया है, "दलाई गुट के लिए 'शांति' एवं 'अहिंसा' जैसे शब्द दिखावटी ही हैं।"

अहिंसा के प्रति हमारी प्रतिबद्धता को अंतरराष्ट्रीय समुदाय द्वारा स्वीकार किया गया है और इसकी प्रशंसा की गई है। यहां तक कि आत्मदाह करने वाले 138 तिब्बतियों ने एक भी चीनी व्यक्ति या संपदा को नुकसान नहीं पहुंचाया है। केंद्रीय तिब्बती प्रशासन बार–बार तिब्बत में रहने वाले तिब्बतियों से यह अपील करता रहा है कि वे आत्मदाह जैसे कदम न उठाएं, लेकिन दुर्भाग्य से खुद को जला देने वाले तिब्बतियों की संख्या चेतावनीजनक रूप से बढ़ रही है। तिब्बत में आत्मदाह करने वाले सभी तिब्बतियों ने परमपावन दलाई लामा की उनकी मातृभूमि में वापसी और तिब्बत की स्वाधीनता की मांग की है। इससे यह साफ हो जाता है कि अपनी मातृभूमि की हालत को लेकर तिब्बती जनता में गहरा गुस्सा और असंतोष है। इसके पीछे वजह यह है कि राजनीतिक दमन, सांस्कृतिक विलोपन, सामाजिक भेदभाव, आर्थिक हाशियाकरण और पर्यावरण विनाश जैसी चीन की नीतियां बुरी तरह विफल रही हैं। इसलिए समाधान बीजिंग के ही हाथ में है।

दलाई लामा की संस्था को आप आगे किस दिशा में जाते देख रहे है? क्या यह मौजूदा स्वरूप में ही बरकरार रहेगी?

मैं यही चाहूंगा, जैसा कि ज्यादातर तिब्बती चाहते हैं, कि परमपावन दलाई लामा का पुनर्जन्म हो और दलाई लामा की परंपरा की यह संस्था बरकरार रहे। परमपावन दलाई लामा ने कहा है कि इसके बारे में अंतिम निर्णय 60 लाख तिब्बती जनता करेगी।

दलाई लामा का 80वां जन्मदिन जुलाई में आ रहा है। निर्वासित तिब्बती सरकार और भारत तथा अन्य देशों में रहने वाली तिब्बती जनता ने इसे किस तरह से मनाने की योजना बनाई है?

एक समर्पित बौद्ध होने के नाते परमपावन खुद अपना जन्मदिन नहीं मनाते, लेकिन तिब्बती जनता और उनके मित्र पूरे 2015 और 2016 में दुनिया भर में इसका उत्सव मनाएंगे।

चीन के सरकारी अखबार ग्लोबल टाइम्स में यह भी कहा गया हैः "भारत सरकार को दलाई लामा का समर्थन करना पूरी तरह से बंद कर देना चाहिए और चीन–भारत रिश्तों में तिब्बत मसले को रोड़ा नहीं बनने देना चाहिए।" इस पर आपकी टिप्पणी।

तिब्बत कोई ऐसा मसला नहीं है जिसे आसानी से कालीन के नीचे ढंक दिया जाए। चीन–भारत रिश्तों में तिब्बत एक मुख्य मसला बना रहेगा और चीन एवं भारत यदि मधुर रिश्ता चाहते

हैं तो इस मसले से भागा नहीं जा सकता। तिब्बती इस बात के लिए भारत सरकार और यहां की जनता के प्रति काफी कृतज्ञ हैं कि हमारे इतिहास के दुखद चरण में उन्होंने लगातार इस तरह का सहयोग किया है।

बीजेपी अध्यक्ष अमित शाह 2 मई को धर्मशाला में दलाई लामा से मिलने वाले थे, लेकिन यह मुलाकात निरस्त कर दी गई और प्रधानमंत्री कार्यालय ने कहा कि मोदी के चीन दौरे से पहले ऐसा करना "काफी अनुपयुक्त" होगा। इसको आप कैसे देखते हैं?

यह कोई मसला नहीं है क्योंकि कई प्रमुख भारतीय नेता परमपावन दलाई लामा से मिल चुके हैं और भविष्य में भी ऐसा होता रहेगा।

भारत में रहने वाले तिब्बती शरणार्थियों के भविष्य के बारे में आप क्या कहना चाहेंगे?

हम भारतीय जनता और उनकी सरकार के प्रति बहुत कृतज्ञ हैं कि उन्होंने 1959 से ही यहां तिब्बती शरणार्थियों की उदारता से मेजबानी की है। हम आपकी इस दयालुता के ऋणी हैं। मैं हाल की तिब्बती पुनर्वास नीति की गहरी सराहना करता हूं जिसने तिब्बती शरणार्थी समुदाय की दशा सुधारने के लिए सभी राज्यों के लिए एक तरह के दिशानिर्देश उपलब्ध कराया है।

क्या आपको लगता है कि भारत में निर्वासन में रह रही तिब्बती जनता, खासकर युवा, अब अधीर हो रही है और वह एक साश्स्त्र संघर्ष की ओर उन्मुख हो सकती है या उन्हें इसके लिए उकसाया जा सकता है?

हमारा संघर्ष अहिंसक संघर्ष है। सत्य और न्याय हमारे पलड़े में है, इसलिए हम इसी दिशा में आगे बढ़ते रहेंगे। कई ऐसे हाशिए के संगठन हैं, जो हमारे अहिंसक संघर्ष के रास्ते पर चलना चाहते होंगे, लेकिन अंतरराष्ट्रीय मीडिया और समुदाय हिंसक आंदोलनों, उग्रवाद, आतंकवाद की तरफ ज्यादा ध्यान देता है, इसलिए इस बात का खतरा रहता है कि ऐसे संगठन भी उसी दिशा में कदम बढ़ा लें। ◆

तिब्बत पर बीजिंग के असुरक्षा की भावना को देखते हुए चीन-भारत सीमा विवाद सुलझता नही दिख रहा

(बिजनेस स्टैंडर्ड, चेंगदू, चीन, 14 मई)

अजय शुक्ला

चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जब आर्थिक रिश्ते बढ़ाने और भारत में बुनियादी ढांचा निर्माण में चीन की मदद की संभावनाओं पर चर्चा करने की तैयारी कर रहे थे, तब लोगों की दिलचस्पी इस बात में थी कि दोनों नेता भारत–चीन सीमा विवाद को हल करने में कोई प्रगति करते हैं या नहीं।

बीजिंग और नई दिल्ली इस बात पर सहमत हैं कि चीन–भारत सीमा (4,000 किमी लंबी वास्तविक नियंत्रण रेखा–एलएसी–) पिछले 40 साल से पूरी तरह से शांतिपूर्ण बनी हुई है। हालांकि, लगातार चल रहे सैन्य भरोसा बहाली उपायों के बाद भी गोली. बारी रुक नहीं पाती है और दोनों सेनाओं द्वारा अपने दावे के मुताबिक क्षेत्र की निगरानी के दौरान छोटी–मोटी झड़प होती रहती है, क्योंकि दोनों पक्ष एक ही इलाके में दूसरे के दावे को नजरअंदाज करते हैं।

सक्रिय भारतीय मीडिया चीनी सैनिकों की गश्ती के दौरान सीमा अतिक्रमण को जोर–शोर से उठाती है, जिसकी छाया

वर्ष 2013 में प्रधानमंत्री ली केछ्यांग और 2014 में राष्ट्रपति शी जिनपिंग की यात्रा पर पड़ी। इसकी तुलना में चीनी मीडिया ने थोड़ा संयम बरता है, लेकिन चीनी सोशल मीडिया में, खासकर माइक्रो–ब्लॉगिंग साइट वीबो में इसी तरह की प्रतिक्रिया देखी गई। यहां तक कि चीन सरकार अपने तमाम निरंकुश ताकत के बावजूद चीनी राष्ट्रवादियों की भावना को भारत के प्रति नरम करने में कामयाब नहीं हुई है।

सीमा विवाद के हल की संभावना पर संदेह अब भी कायम है। इस साल चीन के दौरे पर गईं विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने कहा था, "अब भी एक खास तरह का समाधान निकाला जा सकता है।" चीन के जाने–माने विशेषज्ञ श्याम सरन ने कहा कि ऑस्ट्रेलिया के पूर्व प्रधानमंत्री केविन रुड ने चीन से चर्चा के बाद मार्च में नई दिल्ली में मध्यस्थों के सामने यह खुलासा किया था कि श्री मोदी के चीन दौरे से पहले सीमा पर चीन एक 'चौंकाने वाला पेशकश' कर सकता है।

लेकिन सच तो यह है कि बीजिंग के मुख्य सरोकार को देखते हुए इसकी संभावना नहीं थी। चीन के नेताओं का लगातार यह मानना रहा है कि चीन–भारत सीमा का सवाल तिब्बत में चीन विरोधी अशांति से सीधे जुड़ा हुआ है। एक ऐसी चिंता जिसका समाधान नहीं हो सका है। भारतीय विशेषज्ञ यह भरोसा करने में गलत साबित हुए हैं कि बीजिंग सीमा मसले का समाधान जड़ से इसलिए नहीं करना चाहता है ताकि भारत हमेशा झुका रहे।

भारतीय आशंकाओं पर चीन के बारे में गणित लगाने से पहले यह जान लें कि जहां तक तिब्बत का मामला है, वह एक असुरक्षित देश है। भारत से तिब्बत के सटे होने, भारत द्वारा दलाई लामा एवं निर्वासित तिब्बती सरकार की मेजबानी (जिसे केंद्रीय तिब्बती प्रशासन या सीटीए कहा जाता है) और बौद्ध मठों के जाल, जो तिब्बत में अपने समकक्ष मठों के प्रतिरूप हैं, इन सबकी वजह से भारत दुनिया का एकमात्र ऐसा देश बन गया है, जो चीन के इस अशांत इलाके में कड़ाही को गरम रख सकता है।

इसके अलावा भारत द्वारा बार–बार यह बयान देने से कि वह तिब्बत को चीन का हिस्सा मानता है, बीजिंग को साफतौर पर यह चिंता है कि सीमा विवाद हल करने से भारत को तिब्बत मसले पर अपना रुख पलटने की आज़ादी मिल जाएगी।

दक्षिण एशिया के प्रख्यात चीनी विशेषज्ञ झांग ली का तर्क है कि चीन ने जब भी संबंधों को सुधारने की कोशिश की है, तिब्बत में लपटें तेज हो गई हैं। 1954 में पंचशील समझौते के बाद 1958–59 में तिब्बत की जनक्रांति हुई और 2005 में "पॉलिटिकल पैरामीटर" समझौते के बाद 2008–09 में फिर तिब्बत में एक जनक्रांति हुई।

तिब्बत और सीमा विवाद के बीच संबंध को जोड़ते हुए ली ने कहाः "यदि तिब्बत ज्यादा स्थिर हुआ तो चीन सरकार भारत के साथ सीमा विवाद पर चर्चा करने में ज्यादा लचीला हो पाएगी। चीन सरकार के लिए यह ज्यादा महत्वपूर्ण है कि तिब्बत को स्थिर किया जाए, बजाय पहले सीमा विवाद को हल करने के, जैसा कि भारत उम्मीद करता है।"

दूसरे शब्दों में कहें तो बीजिंग सीमा विवाद का हल तभी करना चाहता है, जब एक बार दलाई लामा का मसला सुलझ जाए। वह इस बात को तरजीह देगा कि दलाई लामा चीन की गहरी निगरानी में ल्हासा वापस जाएं और सीटीए को बंद कर दिया जाए।

हालांकि, भारतीय नीति नियंता, दलाई लामा को चीन को 'सौंपने' की किसी संभावना को सिरे से खारिज करते हैं, यह देखते हुए कि भारत ने उन्हें 56 साल तक राजनीतिक शरण दी है। न ही भारत तवांग–अरुण प्रदेश का सीमावर्ती जिला जिसे चीन अपना हिस्सा बताता है–चीन को सौंपने जा रहा। बुरी तरह से चीन विरोधी बौद्ध मोनपा जनजातियों की जनसंख्या को भारत चीनी बस में बैठाकर बाहर नहीं फेंक सकता।

इसके अलावा बीजिंग और नई दिल्ली के बीच वर्ष 2005 में हुए "राजनीतिक पैरामीटर" में यह सहमति बनी है कि 'निपटारा हो चुकी जनसंख्या'–तवांग के लिए कोड– को अंतिम सीमा समझौते में बेवजह परेशान नहीं किया जाएगा। बीजिंग अपनी इस प्रतिबद्धता से पीछे हटना चाहता है, लेकिन चीन को यह स्वीकार्य नहीं होगा।

चीन ने 1983 से ही तवांग पर जोर देना शुरू किया है। उसके पहले चीन ने एक साफ 'पूर्व के बदले पश्चिम' का प्रस्ताव रखा था। इसमें कहा गया था कि भारत चीन को लद्दाख से सटे अक्साई चिन पठार का 35,000 किमी इलाका सौंप दे, जिसे पश्चिमी क्षेत्र कहा जाता है। इसके बदले बीजिंग अरुणाचल प्रदेश के 90,000 वर्ग किमी इलाके पर भारत का स्वामित्व स्वीकार कर लेगा। इसके अलावा 5000 वर्ग किमी के मध्य क्षेत्र में मामूली बदलाव करने का प्रस्ताव था। चीन ने बिना आबादी वाले अक्साई चिन पर कब्जा कर ही लिया है और विरल जनसंख्या वाला अरुणाचल प्रदेश काफी लंबे समय से भारत के पास है। इसके लिए प्रस्तावित "पश्चिम के बदले पूर्व" में इलाके का कोई बड़ा आदान–प्रदान अब नहीं होना है।

हालांकि, 1983 में चीनी नेता देंग शियाओ–पिंग ने बीजिंग के रवैये को और सख्त कर दिया। उन्होंने यह घोषणा की कि भारत को 'पूर्वी क्षेत्र' में "महत्वपूर्ण एवं सार्थक" रियायतें देनी होंगी, यह खेल बदलने वाली ऐसी मांग थी जिसे बीजिंग तवांग की चीन में 'वापसी' कहता है।

यहां 'वापसी' शब्द का इस्तेमाल महत्वपूर्ण है। वर्ष 1951 तक तवांग का प्रशासन तिब्बत के हाथ में था, लेकिन उस साल भारतीय प्रशासन के लोग आए और उन्होंने ल्हासा से दलाई लामा द्वारा नियुक्त तिब्बती पुरोहित शासकों को वहां से हटा दिया।

इसके बाद से दलाई लामा ने कई मौकों पर यह कहा है कि तवांग भारत का हिस्सा है। तिब्बत पर अपने पूर्ण नियंत्रण में चीन कोई ढील देगा, ऐसा लगता नहीं। इसी तरह भारत भी तवांग को छोड़ने के मूड में नहीं है और चीन चाहता है कि सीमा विवाद के हल करने में तिब्बत में शांति पूर्व शर्त हो, इसलिए सीमा विवाद के मसले पर मोदी और शी के आगे बढ़ने की गुंजाइश बहुत कम थी। ◆